2 मई 2008, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

करना ही है तो स्वाध्याय करो, मनन करो, चिन्तन करो और यदि बन सके तो अपने में ही जम जाओ, रम जाओ; सुखी होने का एकमात्र यही उपाय है।

ह्न सत्य की खोज, पृष्ठ-216

वर्ष : 31, अंक : 03 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

मई (प्रथम), 2008 प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

महावीर जयन्ती एवं उपकार दिवस धूम-धाम से मनाया

1. नई दिल्ली : देश की राजधानी दिल्ली महानगर में 'अध्यात्मतीर्थ' आत्म साधना केन्द्र पर भगवान महावीर स्वामी के 2607 वें जन्मकल्याणक महामहोत्सव एवं आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की 119 वीं जन्मजयन्ती 'उपकार दिवस' के अन्तर्गत आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर एवं श्री रत्नत्रय महामण्डल विधान का आयोजन दिनांक13 से 20 अप्रैल, 08 तक अपूर्व धर्म प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, जयपुर के अध्यात्मरस से ओतप्रोत मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली द्वारा क्रमबद्धपर्याय, बाल ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री द्वारा छहढाला, पण्डित सुनीलजी राजकोट द्वारा द्रव्य-गुण.पर्याय एवं विदुषी राजकुमारीजी इन्दौर द्वारा जैसी करनी वैसी भरनी विषय पर ली गई विशेष कक्षाओं का समाज ने लाभ लिया।

इस अवसर पर दोपहर में व्याख्यानमाला एवं गुरुदेवश्री के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व विषय पर आयोजित गोष्ठी में डॉ. सुदीपजी जैन, डॉ. वीरसागरजी जैन, डॉ. अनेकान्तजी जैन, पण्डित राकेशजी शास्त्री, पण्डित ऋषभजी शास्त्री, पण्डित संदीपजी शास्त्री, पण्डित मनोजजी, पण्डित राजकिशोरजी आदि विद्वानों का लाभ मिला साथ ही श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के विद्यार्थियों द्वारा सांयकालीन बालकक्षाओं का संचालन किया गया।

महोत्सव के दौरान शुक्रवार, दिनांक 18 अप्रैल को भगवान महावीरस्वामी की जन्मजयन्ती पर भव्य शोभायात्रा का आयोजन किया गया व भगवान आदिनाथ व भगवान चंद्रप्रभ के मंदिर में 119 चंवर स्थापित किये गये साथ ही अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन खेकड़ा के बच्चों ने 'मनुष्यभव की उत्कृष्टता' नाटिका का मंचन किया । वीतराग-विज्ञान पाठशाला शंकरनगर, कैलाशनगर, नांगलोई तथा रोहिणी नगर के बच्चों द्वारा ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये।

रविवार, दिनांक 20 अप्रैल को गुरुदेवश्री के 119 भव्य चित्रों को लेकर विशाल शोभायात्रा निकाली गई एवं स्वर्णपुरी सोनगढ़ में गुरुदेवश्री द्वारा 33 शास्त्रों पर हुए प्रवचन ग्रंथों को भगवान महावीर मंदिर में जिनवाणी वेदी पर स्थापित किया गया।

विधि-विधान के समस्त कार्यक्रम बाल ब्र. पण्डित जतीशचंदजी शास्त्री के कुशल निर्देशन में सम्पन्न हुये।

सम्पूर्ण दिल्ली एवं बाहर से पधारे हुए लगभग 400 शिविरार्थियों ने कार्यक्रम का लाभ लिया व हजारों रूपयों के सतसाहित्य व सी.डी. का विक्रय हुआ। देश के प्रमुख मुमुक्षु अतिथियों की उपस्थिति में सम्पूर्ण कार्यक्रम अभूतपूर्व धर्मप्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

इसी श्रंखला में **विश्वासनगर** में कुन्दकुन्द कहान दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 21 अप्रैल को डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के समयसार का सार एवं 22 अप्रैल को पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के समयसार के 42 वें कलश पर हुए मार्मिक प्रवचन का लाभ भी समाज को प्राप्त हुआ।

2. रतलाम (म. प्र.) : यहाँ भगवान महावीरस्वामी की जन्मजयन्ती के अवसर पर राममोहल्ला स्थित दि. जैन आदिनाथ चैत्यालय से तोपखाना स्थित दिगम्बर जैन मंदिर तक शोभायात्रा का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर तत्त्वलहर महिला मण्डल द्वारा छहढाला पर आधारित अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये। साथ ही 'पंच परमेष्ठी का स्वरूप व उसे जानने से लाभ' विषय पर निबंध प्रतियोगिता आयोजित की गई। रात्रि में पारितोषिक वितरण का कार्यक्रम रखा गया। कार्यक्रम का संचालन महिला मण्डल की अध्यक्षा श्रीमती अंजनाजी अजमेरा ने कियाा। सम्पूर्ण कार्यक्रम पण्डित पद्मकुमारजी अजमेरा के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

3. जयपुर (राज.) : यहाँ राजस्थान जैन सभा के तत्त्वावधान में महावीर जयन्ती के प्रसंग पर पंच दिवसीय कार्यक्रमों के अन्तर्गत राष्ट्रीय कवि सम्मेलन, प्रभात फेरी, विद्वत् विचार-गोष्ठी आदि अनेक कार्यक्रम आयोजित किये गये। 18 अप्रैल को महावीर जयन्ती के दिन श्री योगेशजी टोडरका के संयोजकत्व में महावीर पार्क से विशाल जुलूस का शुभारम्भ हुआ जो नगर के विविध मार्गों से होता हुआ रामलीला मैदान पहुँचकर धर्मसभा में परिवर्तित हुआ।

श्री टोडरमल स्मारक भवन में भी प्रात: पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल एवं श्री महेन्द्रकुमारजी पाटनी के करकमलों से झण्डारोहण हुआ। तदुपरान्त बापूनगर जैन समाज के सभी लोगों के साथ श्री टोडरमल स्मारक भवन से जुलूस रवाना हुआ, जो लाल कोठी जैन मंदिर होते हुये पार्श्वनाथ चैत्यालय बापूनगर पहुँचा, जहाँ पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा के उद्बोधन का लाभ मिला। बाद में यह जुलूस जयपुर के मुख्य जुलूस में शामिल हुआ।

मंगलायतन, अलीगढ में 18 मई से 4 जून तक और श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में 3 से 12 अगस्त तक आयोजित शिविरों में अवश्य पधारें।

सम्पादकीय - 5

चलते-फिरते सिद्धों से गुरु

ह्न पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

'जो वैराग्य की पराकाष्ठा को प्राप्त होकर अधिक प्रभावशाली हो जाते हैं, वे अंतरंग-बहिरंग मोह की ग्रन्थि को खोलनेवाले हो जाते हैं। परीषहों व उपसर्गों के द्वारा वे पराजित नहीं होते और कामरूपी शत्रु को जीतनेवाले होते हैं। इत्यादि अनेकप्रकार के गुणों से युक्त साधुओं को किसी से नमस्कार कराने की अपेक्षा नहीं होती, परन्तु मोक्ष की प्राप्ति के लिए मुमुक्षुओं द्वारा वे स्वत: ही नमस्कार करने योग्य होते हैं, मोक्षार्थी उन्हें स्वयं ही वंदन करते हैं; किन्तु इन गुणों से रहित विद्वान साधु भी नमस्कार करनेयोग्य नहीं हैं।'

मुनिराज मोह-क्षोभ रहित साम्यभाव के धारक होते हैं। उक्तं च ह्न

'चारित्तं खलु धम्मो, धम्मो जो सो समोत्ति णिद्दिट्ठो।
मोह-खोह विहीणो परिणामो अप्पणो हु समो ।।'

नियमसार में भी श्री कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं कि जिनके ऐसा साम्य भाव नहीं है, उनका वनवास, कायक्लेशरूप अनेक प्रकार के उपवास, अध्ययन, ध्यान आदि सबसे कुछ लाभ नहीं। सभी प्रकार के उक्त साधनों का प्रयोजन एकमात्र समताभाव का धारण करना है।

मुनिपद की महिमा का उल्लेख करते हुए पंचाध्यायीकार ने आचार्य, उपाध्याय पद से भी साधु पद को श्रेष्ठ लिखा है। वे लिखते हैं कि ह्न

'साधु हुए बिना किसी को केवलज्ञान की उत्पत्ति नहीं होती।'

परमागम में यह अन्वर्थ रूढि प्रसिद्ध है कि वास्तव में साधु पद को ग्रहण किये बिना किसी को भी केवलज्ञान की उत्पत्ति नहीं होती है। श्रेणी पर अधिरूढ आचार्य आदि को भी अपना पद छोड़कर साधु की भूमिका प्राप्त करनी होती है; क्योंकि आचार्य और उपाध्याय ही श्रेणी चढ़ने के काल में सम्पूर्ण चिन्ताओं के निरोधरूप ध्यान को ही धारण करते हैं जो आचार्य व उपाध्याय पद के उत्तरदायित्व के साथ संभव नहीं है।

यहाँ सामाजिक विचारधारावाले कार्यकर्त्ता व्यक्ति यह कह सकते हैं कि ह्न ''महाराज ! इस काल में एवं इस क्षेत्र में न केवलज्ञान होता है और न मुक्ति ही होती है। ऐसी स्थिति में यदि कोई साधु-संत लौकिक कार्यों में रुचि लेते हैं तो हर्ज ही क्या है ? और सामाजिक सुधार हो एवं राजनीति में अपना प्रभाव रहे, जैनेतरों में जिनधर्म की प्रभावना हो, इसके लिए यदि साधु संतों का सहयोग मिल जाता है तो हमारी सफलता में चार चांद लग जाते हैं। आज तीर्थ सुरक्षित नहीं हैं, प्राचीन मन्दिर जीर्ण-शीर्ण हो रहे हैं, समाज संगठित नहीं है, समाज में कुप्रथाओं का बोलबाला है, घर-घर में कलह है, अर्थ प्रधान युग है।

इन समस्याओं के समाधान के लिए यदि संतों के आशीर्वचन एवं थोड़े से सहयोग से काम बनता है तो हमारे ख्याल से तो कुछ हानि नहीं है।''

आचार्यश्री ने समाधान किया कि ह्न ''भाई ! तुम्हारे ख्यालों से मुनिमार्ग नहीं चलता। देखना यह है कि इस विषय में जिनागम में क्या आज्ञा है ?

जिनागम के अनुसार ह्न 'पहली बात तो यह है कि ह्न यद्यपि इस क्षेत्र व इस पंचम काल में केवलज्ञान एवं मुक्ति तो नहीं होती, किन्तु आगम के अनुसार मुक्तिरूपी कल्पवृक्ष के अतीन्द्रिय आनन्दरूप मधुर फल प्राप्त करने हेतु सम्यक्त्वरूप बीज बोने का मंगल अवसर तो यही है, अभी भी है। यदि यह अवसर चूक गये तो पुन: यह अवसर सागरों पर्यंत नहीं मिलेगा। अत: यह मुनिव्रत लेकर अन्यत्र कहीं भी उलझना श्रेयस्कर नहीं है।

दूसरी बात यह है कि ह्न जिन्होंने मुनिव्रत की ऊँची प्रतिज्ञा लेकर तथा जिन शुभाशुभ आस्रव भावों को हेय जानकर छोड़ने का संकल्प किया है तथा संवर, निर्जरा एवं मुक्ति के लिए रत्नत्रय की आराधना/साधना कर मुक्ति के मार्ग में अग्रसर होने की प्रतिज्ञा की है, उस प्रतिज्ञा को भंग करने से बड़ा भारी अक्षम्य अपराध बनता है; क्योंकि शास्त्रों में लिखा है कि 'प्रतिज्ञा न लेने का अल्प दोष है और प्रतिज्ञा लेकर उसे भंग करना अपराध है, जिसका फल दीर्घ संसार है।'

तीसरी बात यह है कि ह्न 'सच्चे मुनियों को तो अतीन्द्रिय आनन्द सागर में डूबे रहने, उसी में बारम्बार डुबकी लगाने से ही फुरसत नहीं है। वे अपने स्वाभाविक सुख के वातानुकूलित वातावरण में मग्न रहते हैं। वे राग-द्वेष की कषायाग्नि की ज्वाला में झुलसने को स्वरूप के सुख सागर से बाहर आते ही नहीं हैं, उनसे सामाजिक संगठन और राजनीति में प्रभाव बढ़ाने की बात भी नहीं की जा सकती। यदि उन्हें यही सब करना होता तो गृहस्थी क्या बुरी थी ?

साधु के स्वरूप का चित्रण करते हुए कहा गया है कि ह्न

दिन रात आत्मा का चिंतन, मृदु संभाषण में वही कथन।
निर्वस्त्र दिगम्बर काया से भी, प्रगट हो रहा अन्तर्मन।।
निर्ग्रन्थ दिगम्बर सद्ज्ञानी, स्वातम में सदा विचरते जो।
ज्ञानी ध्यानी समरससानी, द्वादश विध तप नित करते जो।।
चलते फिरते सिद्धों से गुरु, चरणों में शीश झुकाते हैं।
हम चलें आपके कदमों पर नित यही भावना भाते हैं।।

अत: उनसे लौकिक कार्यों में उलझने की अपेक्षा रखना बिल्कुल भी उचित नहीं है; क्योंकि मुक्ति पाने के उग्र पुरुषार्थी एक दो भव में वहाँ पहुँच जाते हैं, जहाँ से सदा काल में मुक्ति होती है। इसकारण तत्त्वज्ञानी मुनिराज अपने अन्तर्मुखी पुरुषार्थ से हटते नहीं हैं, सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में अटकते नहीं हैं, अपने मोक्षमार्ग से भटकते नहीं हैं। ऐसे मुनिराजों से लौकिक कार्य सिद्ध करने/कराने की अपेक्षा नहीं रखना चाहिए। गृहस्थों द्वारा उन्हें संसार मार्ग में अटकाना किसी के भी हित में नहीं है।

पुनश्च, जो काम गृहस्थों का है, उसमें साधु-संतों को क्यों उलझाना?

क्या यह काम **साग–भाजी के लिए हीरे का हार गिरवी रखने जैसा नहीं है?**

आचार्यश्री ने प्रवचन के बीच में इसे अनुशासन भंग मान कर अनुशासन की सीख देते हुए कहा ह्न ''किसी के ऐसे विचार भी हो सकते हैं कि ह्न 'ये ऊँची–ऊँची बातें तो चौथे काल के मुनियों की बातें हैं। यह तो पंचमकाल है, कलयुग का जमाना है, लोगों में संहनन भी वैसे नहीं हैं। अत: जमाने के साथ कुछ समझौता तो करना ही चाहिए न ?'

उन महानुभावों की एक बात तो यह विचारणीय है कि ह्न 'शास्त्रों में जो कुछ भी साधुचर्या का उल्लेख है, वह पंचमकाल के आचार्यों ने पंचमकाल के मुनियों के लिए ही लिखा है, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड, मूलाचार, भगवती आराधना आदि शास्त्रों की रचना अपने संघ के साधुओं की प्रमुखता से ही की गई है, परवर्ती मुनिराजों के लक्ष्य से ही लिखी गईं हैं। उक्त आचार संहिता इस काल के मुनिराजों को ही बनाई है और उन्होंने अपने संघ के मुनिराजों से इसका पालन भी कठोर अनुशासन के साथ कराया था।

इस आचार संहिता का पालन नहीं करनेवाले को अष्टपाहुड़ में निगोद का पात्र तो कहा ही है, उन्हें तिर्यंच कहकर डांटा/फटकारा भी है।'

दूसरी बात यह है कि सत्य से समझौता नहीं होता। सत्य के यथार्थ स्वरूप को समझकर उसे स्वीकार करना ही मुनिधर्म है। जो मुनिधर्म का निर्दोष रूप से पालन नहीं कर सकते, उनके लिए आचार्य कुन्दकन्द ने कहा है ह्न

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहणं।
केवलिजिणेहिं भणियं सद्दमाणस्स सम्मतं ।।

अध्यात्मरसिक ब्र. रायमलजी ने अपने ज्ञानानन्द श्रावकाचार में मुनिराज के स्वरूपगुप्त रहने का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि ह्न 'जैसे कोई प्यास से पीड़ित पुरुष, ग्रीष्म–ऋतु में मिश्री की डली से घुला–मिला शीतल जल अत्यन्त रुचि से गटक–गटक कर पीता है और तृप्त होता है; वैसे ही शुद्धोपयोगी महामुनि स्वरूपाचरण में अत्यन्त तृप्त हैं, बार–बार उसी रस को चाहते हैं। कभी संज्वलन कषाय के तीव्र उदय से शुभोपयोग में लगते हैं, तब यह जानते हैं कि यह मेरे ऊपर आफत आयी है। यह हलाहल विष समान आकुलता मुझसे कैसे भोगी जाए ? इस समय मेरा आनन्दरस निकल गया है। पुन: मुझे आनन्दरस की प्राप्ति कब होगी? मेरा स्वभाव तो अतीन्द्रिय आनन्दरूप अनुपम स्वरस पीने का है; अत: मुझे तो वही प्राप्त हो।

जैसे समुद्र में मग्न हुआ मच्छ बाहर निकलना नहीं चाहता, वैसे ही मैं ज्ञानसमुद्र में डूबकर फिर नहीं निकलना चाहता। एक ज्ञानरस को ही पिया करूँ, आत्मिक रस बिना और किसी में रस है ही नहीं। सारे जग की सामग्री चेतनारस के बिना जड़स्वभाव धारण करनेवाली उसी भांति फीकी है, जैसे लवण बिना अलोनी रोटी फीकी होती है।'

वे महामुनि आत्मा का ध्यान ही धारण करते हैं, उनका ध्यान देखकर ऐसा लगता है, मानो वे केवली भगवान की प्रतिमा की होड़ कर रहे हैं। वे भगवान की परमशांत मुद्रा के दर्शन कर यह विचारते हैं कि ह्न

'हे भगवन् ! आपके प्रसाद से मैंने भी निज स्वरूप को पाया है, अत: इस समय मैंने अन्तर्मुख होकर निज स्वरूप का ही ध्यान किया है; आपका नहीं। आपके ध्यान के अवलम्बन से मुझे निजस्वरूप का ही ध्यान करते हुए आनन्द विशेष होता है। मुझे अनुभवपूर्वक भी ऐसी ही प्रतीति है और दिव्यध्वनि द्वारा आपने भी ऐसा ही उपदेश दिया है।'

ब्र. रायमल्लजी ने अपने ज्ञानानन्द श्रावकाचार में आगे कहा है कि 'अध्यात्म में निमग्न मुनिराज जब आहार–विहार के समय शुभभाव भूमि में होते हैं, तब उनकी व्यवहारचर्या कैसी होती है ? यह बात भी जानने योग्य है।'

इस बात का चित्रण करते हुए उन्होंने लिखा है कि ह्न 'मुनिराज जब नगर से नगरान्तर, प्रदेश से प्रदेशान्तर विहार करते हैं। आहारचर्या के अर्थ नगरादि में जाते हैं, तब वहाँ वे पड़गाहे जाने पर नवधाभक्ति सहित छियालीस दोष, बत्तीस अन्तराय टालकर खड़े–खड़े एक बार करपात्र में आहार लेते हैं। इत्यादि शुभ कार्यों में प्रवर्तन करते हैं।

मुनि उत्सर्ग मार्ग को छोड़कर परिणामों की निर्मलता के अर्थ अपवाद मार्ग को भी अपनाते हैं और कदाचित् अपवाद मार्ग छोड़कर उत्सर्ग मार्ग को अपनाते हैं। यद्यपि उत्सर्ग मार्ग कठिन है और अपवाद मार्ग सुगम है। छठवें गुणस्थान में आने पर मुनि के ऐसा हठ नहीं है कि 'मुझे कठिन ही आचरण आचरणा है या सुगम ही आचरण करना है।'

कहने का आशय यह है कि मुनि के तो परिणामों की परख है, बाह्य क्रिया का प्रयोजन नहीं है। जिस प्रवृत्ति से परिणामों की विशुद्धता की वृद्धि हो और वीतरागता बढ़े, वही आचरण आचरते हैं। ज्ञान–वैराग्य आत्मा का जो निज लक्षण है, उसे ही चाहते हैं।

मुनिराज छठवें गुणस्थान में आने पर शुभभाव में आते तो हैं; परन्तु शुभभावों में अधिक काल रहना नहीं चाहते। अत: हर अन्तर्मुहूर्त में सप्तम गुणस्थान में जाकर शुद्धोपयोग की भावभूमि में अतीन्द्रिय आनन्द सागर में डुबकी लगाने लगते हैं; समता रस का पान करने लगते हैं। इसी बात को पण्डित दौलतरामजी ने इसप्रकार लिखा है ह्न

यह राग आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये।
चिर भजे विषय–कषाय, अब तो त्याग निजपद बेइये।।

इसप्रकार पण्डित दौलतराम ने भी निजपद में, स्वरूप में मग्न होने की प्रेरणा देते हुए विषय–कषाय और विषयों को प्राप्त करानेवाले पुण्यभावों को त्यागने की ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित किया है तथा परपद में न लगे रहकर स्वपद में आने की पावन प्रेरणा दी है। इतना ही नहीं यह अमूल्य अवसर न चूकने की बात भी कही है।

पण्डित दौलतराम एवं अन्य सभी विचारकों ने यह कहा है कि ह्न

लाख बात की बात यही, निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दंद–फंद निज आतम ध्याओ।।

तथा **कोटि ग्रन्थ को सार यही, ये ही जिनवाणी उचरै है।**
दौल ध्याय अपने आतम को, मुक्तिरमा तोहि वेग वरै है।।

इसप्रकार हम देखते हैं कि निज स्वरूप में लीनता द्वारा ही आत्मकल्याण संभव है। इस बात के लिए ही सम्पूर्ण जिनागम समर्पित है। यत्र–तत्र–सर्वत्र इसी बात को प्रमुखता दी गई है। **(क्रमश:)**

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन की प्रान्तीय कार्यकारिणियों का गठन

1. **गुजरात प्रान्त :** अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, गुजरात प्रान्त की नवीन कार्यकारिणी का गठन निम्नानुसार किया गया ह्न

अध्यक्ष
अनिलकुमार ताराचन्द गाँधी,
तलोद

उपाध्यक्ष
महेन्द्रकुमार
पूंजालाल मेहता,
हिम्मतनगर

उपाध्यक्ष
अजितभाई
मीठालाल मेहता,
अहमदाबाद

मंत्री
मुकेशकुमार
पोपटलाल शाह,
तलोद

कोषाध्यक्ष
हंसमुखभाई
चन्दूलाल मेहता,
हिम्मतनगर

2. **राजस्थान प्रान्त :** राजस्थान में संगठन को सुचारु रूप से संचालित करने हेतु **प्रदेश कार्यकारिणी** का पुनर्गठन किया गया। राजस्थान प्रदेश के **अध्यक्ष** डॉ. उत्तमचंदजी भारिल्ल ने प्रान्तीय कार्यकारिणी का गठन किया। जो निम्नानुसार है ह्न

उपाध्यक्ष ह्न उदयपुर संभाग ह्न डॉ. महावीरप्रसादजी जैन
अलवर संभाग ह्न पण्डित अजितकुमारजी शास्त्री
कोटा संभाग ह्न पण्डित रतनचंदजी शास्त्री
जयपुर संभाग ह्न पण्डित संजीवकुमारजी गोधा
महासचिव ह्न पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा
प्रचार सचिव ह्न पण्डित गणतंत्रजी शास्त्री 'ओजस्वी' बाँसवाड़ा
सांस्कृतिक सचिव ह्न पण्डित धनसिंहजी पिड़ावा
सह-सांस्कृतिक सचिव ह्न पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री पिड़ावा
प्रान्तीय महिला प्रतिनिधि ह्न श्रीमती किरणजी जैन उदयपुर
जिला प्रतिनिधि ह्न जयपुर ह्न पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ़
अलवर ह्न श्री अजयकुमारजी जैन
उदयपुर ह्न पण्डित खेमचंदजी शास्त्री
बाँसवाड़ा ह्न पण्डित रितेशजी शास्त्री डडूका
अजमेर ह्न श्री मोतीचंदजी गदिया।

प्रदेश कार्यकारिणी के सभी सदस्य, अध्यक्ष, मंत्री एवं समस्त शाखाओं के पदाधिकारीगण अपने-अपने क्षेत्रों में सक्रिय होकर तीर्थधाम मंगलायतन अलीगढ़ में दिनांक 24-25 मई, 08 को आयोजित 29 वें राष्ट्रीय अधिवेशन में सम्मिलित होने हेतु दृढ संकल्प के साथ तैयार रहें। वहाँ पर संगठन के भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा आदि पर विचार-विमर्श कर निर्णय लिया जायेगा। इस सन्दर्भ में आपकी समस्यायें एवं सुझाव भी आमंत्रित हैं। **ह्न डॉ. उत्तमचन्द जैन**
अध्यक्ष ह्न राज.प्रान्त, 9414003242

भव्य वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव

कोटा (राज.) : यहाँ अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा कोटा के तत्त्वावधान में श्री दिगम्बर जैन पोरवाल मंदिर रामपुरा में दिनांक 23 से 25 अप्रैल, 2008 तक तीन दिवसीय वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव का भव्य आयोजन आदरणीय बाबू जुगलकिशोरजी युगल कोटा के मंगल सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

प्रतिष्ठा महोत्सव की सम्पूर्ण विधि पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित धर्मचन्दजी जैन जैथल एवं सहयोगी पण्डित चेतनजी शास्त्री कोटा, पण्डित प्रयंकजी शास्त्री रहली एवं पण्डित निकलंक शास्त्री कोटा द्वारा सम्पन्न हुई।

इस अवसर पर पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री रहली के समयसार पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। कार्यक्रम में पण्डित विजय शास्त्री, पण्डित आशीष शास्त्री, पण्डित समीर जैन, पण्डित अभिलाष शास्त्री, पण्डित अमित शास्त्री, पण्डित समकित शास्त्री एवं पण्डित शौर्य शास्त्री का सहयोग मिला।

झण्डारोहण श्री गुलाबचन्दजी जैन पोरवाल परिवार ने किया। इस प्रसंग पर **भगवान महावीरस्वामी** की प्रतिमा श्री पारसचन्दजी हरकचन्दजी परिवार, **भगवान शांतिनाथ** की प्रतिमा श्री सूरजमलजी रतनबाई परिवार एवं **भगवान पार्श्वनाथ** की प्रतिमा डॉ. संतोष जैन परिवार ने स्थापित की।

महोत्सव को सफल बनाने में फैडरेशन के पदाधिकारी एवं कार्यकर्त्ता श्री तेजमल जैन, जिनेन्द्र जैन, अजय जैन, रमेशचन्द जैन, पारसचन्द पोरवाल, वेदप्रकाश जैन, लाभचन्द पटवारी, महावीर पटवारी, ओमप्रकाश जैन, नरेन्द्र गर्ग, शुद्धात्म जैन, अकलंक जैन, विजय लुहाडिया आदि का सक्रिय योगदान रहा।

कार्यक्रम का कुशल संयोजन चिन्मय जैन ने किया। **ह्न जिनेन्द्र जैन**

आए हैं .... भव्य पुरुष !

आए हैं .... आए हैं ....
आए हैं कोई भव्य पुरुष अब
सबको ये समझाने -
देव-नारकी, धनी-दरिद्री, कोई नहीं है भाई ...
बधा भगवान छे ... अहा !
बधा भगवान थाव ... अहा ! ।। टेक ।।
एकवस्तु दूजे का कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता नहीं है,
सभी वस्तु स्वाधीन सदा हैं, पर करता भूल यहीं है,
अपना स्वामी आप है ह्न इसका ज्ञान तू करता नहीं है,
वीर प्रभु की, कुन्दकुन्द की वाणी में भी यही है .... ।।1।।
पर्वत नद-तट, तरु तल नीचे निजरस जो पीते हैं,
भव-भोगन तैं वैरागी मुनि सकलव्रती होते हैं,
ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं भावना ये भाते हैं,
फिर आरोपी से कहते ह्न भूला भगवान यही है .... ।।2।।
अशरीरी होने शास्त्र समयसार समझाया,
है निश्चय-व्यवहार नयों में, मुख्य गौण बतलाया,
पर्यायें सब क्रमबद्ध हैं, भ्रम चिन्ता को मिटाया,
बिना दृष्टि के चरण हैं घातक, आर्ष वचन भी यही है .... ।।3।।

ह्न डॉ. बी. उमापति जैन, चैन्नई

समयसार और गीता

(जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्व-विद्यालय, जयपुर द्वारा आयोजित 25 वीं अखिल भारतीय जैन विद्या संगोष्ठी के अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा पठित आलेख को पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है। ह्न प्रबंध सम्पादक)

महाकवि व्यासकृत महाभारत का वह अंश, जिसमें युद्धभूमि में महारथी अर्जुन और उनके सारथी भगवत् श्रीकृष्णजी का संवाद है और जो भगवद्गीता के नाम से प्रसिद्ध है; ऐसी अत्यन्त लोकप्रिय कृति गीता और विक्रम की प्रथम शताब्दी के दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द कृत जिन-अध्यात्म का प्रतिपादक कालजयी ग्रन्थाधिराज समयसार की विषयवस्तु का अहिंसा के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना ही इस लघु निबंध का विषय है।

गीता हिन्दु समाज की वह सर्वमान्य कृति है कि जिसपर हाथ रखकर भारतीय न्यायालयों में सत्य बोलने की सौगन्ध दिलाई जाती है और समयसार उस भगवान आत्मा का प्रतिपादक महान शास्त्र है कि जिसके दर्शन का नाम सम्यग्दर्शन, जिसके जानने का नाम सम्यग्ज्ञान और जिसमें जमने-रमने, जिसका ध्यान करने का नाम सम्यक्चारित्र है।

आत्मा के सन्दर्भ में जैसा प्रतिपादन समयसार में है, बहुत कुछ वैसा ही प्रतिपादन गीता में देख कर हमें ऐसा लगने लगता है कि क्या अन्तर है समयसार और गीता में?

समयसार में आत्मा को देह में रहते हुये भी देह से भिन्न बताया गया है; अजर, अमर, अविनाशी, अनादि-अनन्त बताया गया है और गीता के दूसरे अध्याय के 20 वें श्लोक में कहा गया है कि ह्न

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥

यह आत्मा किसी काल में न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है; क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है; शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता।

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातियति हन्ति कम्॥२१॥

हे पृथापुत्र अर्जुन ! जो पुरुष इस आत्मा को नाशरहित, नित्य, अजन्मा और अव्यय जानता है; वह पुरुष कैसे किसको मरवाता है और कैसे किसको मारता है?

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥२२॥

जिसप्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्रों को ग्रहण करता है, उसीप्रकार जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नये शरीरों को प्राप्त होता है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥२३॥

इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, आग जला नहीं सकती, जल गला नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥२४॥

क्योंकि यह आत्मा अच्छेद्य है, अदाह्य है, अक्लेद्य है और निःसन्देह अशोष्य है तथा यह आत्मा नित्य, सर्वव्यापी, स्थाणु के समान अचल और स्थिर रहनेवाला सनातन है।

यद्यपि भगवत् गीता के उक्त छन्दों को पढ़कर तो हमें ऐसा ही लगता है कि हम समयसार पढ़ रहे हैं; तथापि जब हम गहराई में जाकर देखते हैं तो दोनों के निष्कर्षों में पूर्व-पश्चिम का अन्तर दिखाई देता है।

कौरव और पाण्डवों के बीच महाभारत (भयंकर युद्ध) की पूरी तैयारी है, दोनों ओर की सेनायें और सेनापति आमने-सामने हैं और युद्ध आरम्भ होने वाला ही है कि पाण्डवों के सेनापति अर्जुन का चित्त विचलित हो उठा। वे सोचते हैं कि सामने भी तो अपने भाई ही हैं, संबंधी ही है, गुरु हैं, गुरुभाई हैं। युद्ध का परिणाम चाहे जो कुछ भी हो; पर लाखों लोगों का संहार तो होगा ही। दोनों ओर मरने वाले तो अपने ही लोग हैं। अपनों को मारकर जो राज्य मिले, वह मुझे नहीं चाहिये।

कहा भी है कि ह्न **राजसुख लोहूभरी कीच का कमल है।**

गीता कहती है कि अर्जुन को मोह उत्पन्न हो गया है; इसलिये वह मरने-मारने के लिये तैयार नहीं है। किन्तु समयसार की दृष्टि में यह हिंसा से विरक्ति का भाव है, अहिंसक मनोवृत्ति का परिणाम है।

सम्पूर्ण गीता अर्जुन के उक्त मोह के नाश के लिये ही लिखी गई है। इसी सन्दर्भ में गीता में यह कहा गया है कि आत्मा अजर-अमर है, वह तो कभी मरता ही नहीं है, वह आग में जलता नहीं है, पानी से गलता नहीं है, हथियारों से छिदता-भिदता नहीं है। जिस देह के वियोग को लोक में मरण कहा जाता है, वह तो ऐसा ही है कि जैसे हम कपड़े बदल लेते हैं। इसमें क्या है? जैसे कपड़े बदले; वैसी ही देह बदल ली। अतः यह कोई बड़ी बात नहीं है। यह तो साधारण सी बात है, जिसके लिये हे अर्जुन! तू अपने कर्त्तव्य से विमुख हो रहा है। इसलिये मैं कहता हूँ कि तू युद्ध से विरक्त न हो, जमकर युद्धकर।

यदि आचार्य श्री कुन्दकुन्द के पास कौरव या पाण्डव कोई भी आते तो वे सबसे यही कहते कि जब शरीर ही अपना नहीं है तो राजपाट अपना कैसे हो सकता है। साधारण राजपाट के लिये मरने-मारने पर उतारु हो जाना समझदारी का काम नहीं है। अरे भाई ! यहाँ तो आमने-सामने मरनेवाले सब अपने ही लोग हैं। यदि अपने न भी हो, तब भी किसी की मौत की कीमत पर तो ज्ञानीजन कुछ भी नहीं चाहते।

गीता आत्मा की अमरता की चर्चा करके भी अर्जुन को युद्ध के लिये प्रेरित करती है, जबकि समयसार के अनुसार अमरता की चर्चा हिंसा से विरक्ति के लिये ही है।

गीता कहती है कि अन्याय के विरुद्ध की गई हिंसा हिंसा नहीं है; पर समयसार कहता है कि हिंसा तो हिंसा है, उसे किसी भी तर्क के आधार पर अहिंसा नहीं माना जा सकता, उचित नहीं ठहराया जा सकता।

बहुत समझाने पर भी जब अर्जुन का मोह भंग नहीं हुआ और वह युद्ध करने के लिये उत्साहित नहीं हुआ तो गीता के ग्यारहवें अध्याय के 32 वें श्लोक में श्रीकृष्णजी कहते हैं ह्न

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः।।

श्रीकृष्णजी बोले ह्न मैं लोकों का नाश करनेवाला बढ़ा हुआ महाकाल हूँ। इस समय इन लोकों को नष्ट करने के लिये प्रवृत्त हुआ हूँ। इसलिये जो प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित योद्धा लोग हैं वे सब तेरे बिना भी नहीं रहेंगे अर्थात् तेरे युद्ध न करने पर भी इन सबका नाश हो जायेगा।

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।
मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।।३३।।

अतएव तू उठ! यश प्राप्त कर और शत्रुओं को जीतकर धन-धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग। ये सब शूरवीर पहले ही से मेरे ही द्वारा मारे हुए हैं। हे सव्यसाचिन्![१] तू तो केवल निमित्तमात्र बन जा।

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्।
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्।।34।।

द्रोणाचार्य और भीष्मपितामह तथा जयद्रथ और कर्ण तथा और भी बहुत-से मेरे द्वारा मारे हुए शूरवीर योद्धाओं को तू मार। भय मत कर। निःसन्देह तू युद्ध में वैरियों को जीतेगा। इसलिये युद्ध कर।

उक्त छन्दों में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि मैं महाकाल हूँ और तेरे शत्रुओं का नाश करने के लिये प्रवृत्त हूँ; अतः तेरे युद्ध न करने पर भी इनका नाश सुनिश्चित है। ये लोग तो मेरे द्वारा पहले ही मारे हुये लोग हैं, तू तो मात्र निमित्त बनजा और इन्हें जीतकर धन-धान्य से सम्पन्न राज को भोग।

द्रोण, भीष्म, जयद्रथ और कर्ण आदि सभी मेरे द्वारा मारे हुये शूरवीर योद्धाओं को मार, भय मतकर, निश्चितरूप से तू ही जीतेगा; अतः युद्ध कर।

उक्त सन्दर्भ में समयसार का कहना यह है ह्न

जो मण्णदि हिंसामि य हिंसिज्जामि य परेहिं सत्तेहिं।
सो मूढ़ो अण्णाणी णाणी एत्तो दु विवरीदो।।२४७।।
आउक्खयेण मरणं जीवाणं जिणवरेहिं पण्णत्तं।
आउं ण हरेसि तुमं कह ते मरणं कदं तेसिं।।२४८।।
आउक्खयेण मरणं जीवाणं जिणवरेहिं पण्णत्तं।
आउं ण हरंति तुहं कह ते मरणं कदं तेहिं।।२४९।।
जो मण्णदि जीवेमि य जीविज्जामि य परेहिं सत्तेहिं।
सो मूढ़ो अण्णाणी णाणी एत्तो दु विवरीदो।।२५०।।
आऊदयेण जीवदि जीवो एवं भणंति सव्वण्हू।
आउं च ण देसि तुमं कहं तए जीविदं कदं तेसिं।।२५१।।
आऊदयेण जीवदि जीवो एवं भणंति सव्वण्हू।
आउं च ण दिंति तुहं कहं णु ते जीविदं कदं तेहिं।।२५२।।

बंधाधिकार की उक्त गाथाओं का हिन्दी पद्यानुवाद इसप्रकार है ह्न

(हरिगीत)

मैं मारता हूँ अन्य को या मुझे मारें अन्यजन।
यह मान्यता अज्ञान है जिनवर कहें हे भव्यजन।।२४७।।
निज आयुक्षय से मरण हो यह बात जिनवर ने कही।
तुम मार कैसे सकोगे जब आयु हर सकते नहीं।।२४८।।
निज आयुक्षय से मरण हो यह बात जिनवर ने कही।
वे मरण कैसे करें तब जब आयु हर सकते नहीं।।२४९।।
मैं हूँ बचाता अन्य को मुझको बचावे अन्यजन।
यह मान्यता अज्ञान है जिनवर कहें हे भव्यजन।।२५०।।
सब आयु से जीवित रहें यह बात जिनवर ने कही।
जीवित रखोगे किसतरह जब आयु दे सकते नहीं।।२५१।।
सब आयु से जीवित रहें यह बात जिनवर ने कही।
कैसे बचावें वे तुझे जब आयु दे सकते नहीं।।२५२।।

उक्त गाथाओं में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि न तो कोई किसी को मार सकता है और न कोई किसी को बचा ही सकता है; क्योंकि सभी जीवों का जीवन-मरण स्वयं की होनहार और स्वयं के कर्मों के उदयानुसार स्वकाल में ही होते हैं। अतः दूसरों को मारने के भाव करके व्यर्थ पापबंध क्यों करते हो?

तात्पर्य यह है कि गीता कहती है कि तू इन्हें मार और उसके फल में भरपूर सुख भोग और समयसार कहता है कि संसार में सुख है ही कहाँ? इन्हें मारने का भाव करके नरक-निगोद के अनंत दुःखों को आमंत्रण क्यों देता है? यदि तुझे सुखी होना है, वास्तविक सुख प्राप्त करना है तो स्वयं को जानकर, स्वयं में ही अपनापन स्थापित कर, स्वयं में ही समा जा।

गीता कहती है कि भगवान् कहते हैं कि मैं महाकाल हूँ और ये तेरे शत्रु मेरे द्वारा ही मरण को प्राप्त होंगे; तू तो निमित्त मात्र है; अतः डरता क्यों है? तेरी जीत सुनिश्चित है। अतः निर्भय होकर मार और विजय से प्राप्त राजसुखों को भोग।

समयसार कहता है मरण सुनिश्चित है और वह कर्मोदयादि के निमित्त से स्वकाल में ही होता है; अतः मारने के विकल्प से विराम ले।

जहाँ एक ओर गीता युद्ध के लिये प्रेरित कर हिंसा का समर्थन करती दिखाई देती है; वहीं समयसार मारने की बात तो बहुत दूर मारने के भावों से भी बचने की सलाह दे रहा है।

यहाँ कोई कह सकता है कि क्या आप यह कहना चाहते हो कि श्रीकृष्ण नारायण युद्ध और हिंसा के समर्थक थे?

नहीं, कदापि नहीं; क्योंकि कौरव और पाण्डवों में युद्ध न हो, व्यर्थ

ही रक्तपात न हो ह्न इसके लिये श्रीकृष्णजी ने सीमातीत प्रयास किये थे; इससे तो यही सिद्ध होता है कि वे युद्ध और युद्धों में होने वाली हिंसा को अच्छा नहीं मानते थे। सच्चे मन से किये गये उनके उक्त प्रयासों से सहज ही सिद्ध है कि वे मूलतः तो अहिंसक ही थे, हिंसक युद्धों के समर्थक नहीं।

वस्तुतः विचारणीय बात यह है कि क्या अर्जुन पहले से यह नहीं जानते थे कि युद्ध में सीमातीत विनाश होगा, दोनों ओर के अनेकानेक सैनिक मारे जायेंगे और हारनेवाले के हाथ तो कुछ लगेगा ही नहीं, जीतनेवालों को भी अनाथ बच्चों और वीर विधवाओं के अलावा क्या मिलनेवाला है? हरे–भरे खेतों के स्थानपर उजड़े हुये खेत–खलियान के अलावा क्या हाथ लगनेवाला है।

पर विचारणीय बात यह है कि ह्न अब इस स्थिति में कि जब दोनों ओर की सेनायें आमने–सामने हैं, तब एक ओर का सेनापति ही नहीं लड़ने की बात करने लगे तो फिर समझाने के लिये इसके अलावा और क्या रास्ता रह जाता है कि अब कायरता की बातें मत करो, स्थिति का डटकर मुकाबला करो।

बस यही काम श्रीकृष्णजी ने किया, इसमें अनुचित क्या है? इस आधार पर गीता के सन्देश को हिंसा और युद्ध का समर्थक कैसे कहा जा सकता है?

आपको शादी नहीं करना है तो मत करिये; कौन बाध्य करता है कि आपको शादी करनी ही पड़ेगी; पर घोड़े पर चढ़कर दुल्हन के घर पहुँच जायें, छह फेरे पड़ जायें; तब आपको यह सूझें कि मुझे तो ब्रह्मचर्य से रहना है, शादी करनी ही नहीं है। उस समय सभी समझदार लोग चुपचाप शादी कर लेने के अलावा और क्या सलाह दे सकते हैं?

श्रीकृष्णजी ने भी ऐसा ही किया, पर समयसार का कहना यह है कि परिस्थितिजन्य उपदेश कुछ भी क्यों न हो; पर सनातन सत्य तो यही है कि युद्ध और हिंसा को किसी भी रूप में प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता।

सच्ची समझ तो जब आजावे, तभी अच्छी है; उसे परिस्थिति के आधार पर नकारा नहीं जा सकता। वैराग्य का कोई समय तो होता नहीं; **जब जाग जावें तभी है सवेरा** वाली स्थिति है। यदि सातवाँ फेरा पड़ने के पहिले तक भी वैराग्य आजावे तो भी अच्छा है; क्योंकि उसके बाद आने पर तो स्थिति और भी विषम हो सकती है।

यदि वैराग्य युद्ध के बीच में आ जाये, तब भी अच्छा है; यदि आरंभ करने के पहले आ जावें तो उसे बुरा कैसे कहा जा सकता है? सबसे अच्छा तो यही है कि हमें समय रहते चेत जाना चाहिये; पर न चेत पाये तो क्या आग में कूद जाना चाहिये। प्रथमानुयोग में ऐसे भी अनेक उदाहरण हैं कि युद्ध के बीच में ही वैराग्य हो गया और सबकुछ छोड़कर दीक्षा लेकर चल दिये। युद्ध के अन्त में तो वैराग्य अनेकानेक लोगों के मन में आता ही है, आना ही चाहिये।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि आत्मा के स्वभाव के सन्दर्भ में भले ही समयसार और गीता बहुत कुछ समान नजर आते हों, तथापि जब युद्ध की प्रेरणा और हर स्थिति में अहिंसक आचरण की बात पर विचार करते हैं तो दोनों में पूर्व–पश्चिम का अन्तर दिखाई देता है।

वस्तुतः बात यह है कि गीता का सन्देश तो यह है कि युद्धों का नहीं होना ही सर्वश्रेष्ठ है, अहिंसा ही ज्येष्ठ है; परन्तु जब कभी ऐसी स्थिति आ जावे कि युद्ध के बिना चले ही नहीं, तब तो जो भी हो, परिस्थिति का सामना करना ही श्रेष्ठ है; पर समयसार का कहना है कि वास्तविक धर्म परिस्थितियों का दास नहीं होता; वह तो सदा और सर्वत्र एकसा ही रहता है। अग्नि सभी जगह और तीन काल में गर्म ही होती है। जो देश और काल से अतीत हो, वास्तविक धर्म तो वही है।

जब हम और अधिक गहराई में जाते हैं तो प्रतीत होता है कि आत्मधर्म तो एक व्यक्तिगत चीज है और राग से वीतरागता की ओर जाना ही श्रेष्ठ है। महायुद्ध व्यक्तिगत नहीं होते; उनमें अनेकानेक लोग सम्बद्ध होते हैं, अनेकानेक लोग प्रभावित होते हैं ह्न ऐसी स्थिति में एक व्यक्ति की मनःस्थिति के आधार पर एकपक्षीय निर्णय कैसे लिया जा सकता है ?

यद्यपि उक्त बात काफी वजनदार है, तथापि आत्महित के लिये कटिबद्ध व्यक्ति को बलात् युद्ध में नियोजित करना भी तो युक्तिसंगत नहीं लगता।

एक बार श्रीमद् रायचन्द्रजी से महात्मा गाँधी ने पूँछा कि एक व्यक्ति मेरे सामने पिस्तोल तान कर खड़ा है और मेरे हाथ में भी पिस्तोल है। यदि एक मिनट के भीतर मैं उस पर गोली नहीं चलाऊँगा तो वह मुझे मार देगा। बोलो मुझे क्या करना चाहिये?

श्रीमद् एकदम गंभीर हो गये और चुप रहे। जब उनसे उत्तर देने के लिये बार–बार अनुरोध किया गया तो कहने लगे कि एक भव बचाने के लिये मैं तुम्हें गोली चलाने की सलाह देकर न तुम्हारे अनेक भव बिगाड़ना चाहता हूँ और न अपने। समझ लीजिये समयसार का यही सन्देश है और गीता तो साफ–साफ कहती ही है कि ह्न **शठे शाठ्यं समाचरेत्।**

लौकिक दृष्टि से गीता की बात भले ही अच्छी लगती हो, पर पारलौकिक दृष्टि से तो अहिंसा ही सर्वश्रेष्ठ है। ●

सम्पूर्ण बालबोध प्रश्नोत्तरी तैयार

पं. खेमचंदजी जैन 'जैनदर्शनचार्य' की धर्मपत्नी श्रीमती नीलमजी जैन ने देशभर में संचालित वीतराग–विज्ञान पाठशालाओं के बच्चों की सुविधा हेतु बालबोध प्रश्नोत्तरी भाग–1, 2 व 3 का लेखन किया है, जिसमें पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल एवं डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा लिखित बालबोध पाठमाला भाग–1, 2 व 3 की सम्पूर्ण विषय–वस्तु को सरल तरीके से प्रश्नोत्तर के रूप में प्रस्तुत किया गया है; जिसको भी आवश्यकता हो, वह निम्नलिखित पते पर दस रूपये के फ्रेश डाक टिकट भेजकर निःशुल्क मंगालें।

खेमचंद जैन, 578, हिरण मगरी सेक्टर ह्न 13, महावीर विद्या मंदिर स्कूल के सामने, उदयपुर ह्न 01, फोन नं. ह्न 9414711038

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन : क्या? क्यों?? किसके लिये???

ह्न परमात्म प्रकाश भारिल्ल

आत्मार्थियों के इस संगठन अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के दो प्रमुख उद्देश्य हैं ह्न

(1) आत्मानुभूति (2) तत्त्व प्रचार

यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है कि ''भला आत्मानुभूति के लिये संगठन की क्या आवश्यकता है?'' आत्मानुभूति तो एक एकाकी प्रक्रिया है।

संगठन की आवश्यकता एवं उपयोगिता पर तो मैं अभी विस्तार से प्रकाश डालूँगा ही पर उसका महत्त्व सिर्फ इस एक तथ्य से भलीभाँति समझा जा सकता है कि शास्त्रों में निग्रन्थ मुनियों को भी समूह (संघ) में रहने का आदेश दिया गया है। (यद्यपि विशिष्ट परिस्थितियों में एकल विहारी रहने का भी प्रावधान है।)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसे हर कार्य के लिए साथ चाहिये।

मनुष्य के लिए साथ का महत्व मात्र इसी तथ्य से भलीभाँति समझा जा सकता है कि ''अकेले इसे अच्छे से अच्छा कार्य करने में भी संकोच होता है, लज्जा आती है, हिचक होती है एवं समूह में यह शर्मनाक से शर्मनाक खतरनाक से खतरनाक काम करने से भी नहीं चूकता है। उदाहरण के लिए ह्न यदि किसी से कहा जाये कि पीले धोती–दुपट्टे पहिनकर नंगे पाँव घर से मन्दिर तक पूजन के लिए जाओ तो उसे संकोच होगा, लज्जा आयेगी। यद्यपि यह कोई घृणित या शर्मनाक कृत्य नहीं है वरन् यह तो गौरवशाली कार्य है।

वही दूसरी ओर इसे समूह में अपने मुँह पर कालिख पोतकर फटे पुराने बदरंग कपड़े पहिन कर भरे बाजार में हुड़दंग मचाने में भी संकोच नहीं होता। (होली के अवसर पर) शर्म नहीं आती।

अरे और तो और यदि इसे 10–20 लोग साथ में मरने वाले भी मिल जावें तो यह मरने को भी तैयार हो जावे। दंगे–फसाद व युद्ध इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

अरे समूह में इसे लूटपाट व व्यभिचार करने में भी संकोच नहीं होता, लज्जा नहीं आती।

तात्पर्य यह है कि इसे समूह चाहिये, समाज चाहिए।

हर हालत में, हर कीमत पर समाज की व समूह की यही चाहत इसे घर के दायरे से बाहर निकाल कर चौराहे पर खड़ा कर देती है।

यह समाज में विद्यमान समूहों में शामिल हो जाता है; संगठनों में जुड़ जाता है।

मानव की एक और सहज वृत्ति है, विशिष्ट दिखने व सबसे आगे रहने की। वह समूह में रहकर विशिष्ट दिखना चाहता है, समूह का नेता बनना चाहता है।

आज यदि वह किसी भोगवादी संगठन से जुड़ जाता है, तो बढ़–चढ़कर भोगवादी प्रवृत्तियों में हिस्सा लेगा।

अरे तुम यह ब्राण्ड पीते हो? मैं तो वह ब्राण्ड पसन्द करता हूँ।

अरे तुम्हारी साड़ी सिर्फ 15,000 रुपये की है, मैं तो 10000 से कम की को हाथ ही नहीं लगाती।

क्या? तुम कश्मीर जा रहे हो? मैं तो भाई स्वीट्जरलैण्ड से कम सोचता भी नहीं।

यदि वह किसी हिंसक आतंकवादी संगठन में जुड़ जाता है तो उसमें अधिकाधिक खूँखार व निष्ठुर बनने की होड़ पैदा होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्य पानी की तरह है जिस बर्तन में डालो उस आकार का हो जाता है।

यदि वह आत्मार्थियों के संगठन में शामिल हो तो उसकी होड़ कुछ इसप्रकार की होगी ह्न

क्या तुम सिर्फ 1 घंटा स्वाध्याय करते हो? मैं तो दो घंटे से कम कभी नहीं?

क्या तुम सिर्फ इकट्टे छन्ने से पानी छानकर पीते हो तो वो दोहरे छन्ने से बिल्कुल मर्यादा के अनुसार ह्न

क्या तुमने अभी रात्रि भोजन का त्याग किया है? मैं तो 25 वर्षों से .....

क्या? तुम 10 जोड़ी कपड़े रखते हो? क्या जरूरत है मैं तो सिर्फ 2 जोड़ी .....

तात्पर्य यह है कि यह घर से बाहर निकला तो समूह में तो जुडेगा, होड़ तो करेगा। अब यह निर्णय आपको करना है कि आपको कैसा साथ चाहिए? कौनसी होड़ चाहिये?

वह अपने गले की खुजली तो मिटाएगा। फड़कती माँस–पेशियों को कसरत तो देगा।

अब यह आपको निर्णय करना है कि वह किसी डिस्को क्लब में गाये-नाचे या जिन मन्दिर में भगवान की भक्ति में नर्तन करे।

यदि हम चाहते हैं कि हम व हमारे बालक बाहरी वातावरण में व्याप्त प्रदूषण एवं सामाजिक सांस्कृतिक इन्फैक्शन लेकर घर न लौटें तो हमें उनकी सभी प्रकार की व्यक्तिगत व सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति अपने दायरे में ही करनी होगी।

यद्यपि हम आत्मार्थी हैं, तथापि आत्मार्थियों की शारीरिक, मानसिक, व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक आवश्यकता भी तो होती है।

यदि हम अपनी अधिकतम समाज स्वीकृत, उचित, नैतिक आवश्यकता की पूर्ति के साधन अपने सात्विक समाज के दायरे में ही विकसित करते हैं तो हमारे अन्दर बाहरी प्रदूषण के आक्रमण के खतरे न्यूनतम हो जायेंगे।

यहाँ मेरी आवश्यकताओं की परिभाषा में स्वाध्याय, सदाचार, संस्कार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, आजीविका, गृहस्थधर्म, मनोरंजन, पर्यटन आदि कुछ सभी शामिल हैं।

यदि आप भी अपनी उक्त सभी आवश्यकताओं की पूर्ति सात्विक ढंग से करते हुए एक उज्ज्वल, धवल, सदाचार युक्त, सात्विक, नैतिक समृद्ध, शान्तिपूर्ण, गौरवमयी व स्वपर कल्याणकारी जीवन जीना चाहते हैं तो आइए ह्न

ह्न आप स्वयं आत्मार्थियों के संगठन अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन में शामिल हो सकते हैं।

ह्न अपने अन्य साथियों को भी इससे परिचित करवाइये।

ह्न सात्विक/समान विचारधारा के सभी लोगों को इसमें शामिल होने के लिए प्रेरित करिये।

ह्न फैडरेशन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्य कीजिए।

ह्न इसके कार्यक्रमों को सफल बनाने में योगदान दीजिए।

ह्न इसके विस्तार में सहयोगी बनिए।

इसप्रकार अपने आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त कीजिए एवं प्रदूषण मुक्त समाज की स्थापना में अपना योगदान दीजिए।

आप अपने एवं अपने परिवार के सुखद भविष्य के लिए आश्वस्त हो जाइए।

42 वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, मंगलायतन में

आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की प्रेरणा से निर्मित पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित 42 वाँ श्री वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष दिनांक 18 मई से 04 जून, 2008 तक मंगलायतन (अलीगढ़-उ.प्र.) में होना निश्चित हुआ है। शिविर के माध्यम से अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाई-बहिनों को शिक्षण-विधि में प्रशिक्षित किया जायेगा।

इस अवसर पर आपको डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित कैलाशचन्दजी बुलन्दशहर, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा जयपुर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी जैन आगरा, पण्डित बाबूभाई मेहता फतेपुर, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित राकेशजी शास्त्री अलीगढ़, पण्डित अशोकजी लुहाड़िया अलीगढ़, पण्डित संजयजी शास्त्री अलीगढ़ आदि अनेक विद्वानों के प्रवचनों/कक्षाओं का लाभ मिलेगा। अपने पहुँचने की पूर्व सूचना देवें।

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन का ह्न

उन्तीसवाँ राष्ट्रीय अधिवेशन मंगलायतन में

(रविवार, दिनांक 25 मई 2008)

अधिवेशन के पूर्व राष्ट्रीय कार्यकारिणी की मीटिंग 24 मई, 08 को तीर्थधाम मंगलायतन में आयोजित की गई है, जिसमें फैडरेशन द्वारा अभी तक किये गये कार्यों की समीक्षा एवं आगामी कार्यक्रमों की योजना पर विचार किया जायेगा।

अधिवेशन में सभी शाखाओं के अधिक से अधिक सदस्यों को उपस्थित होना है। शाखायें कम से कम 2 प्रतिनिधि अधिवेशन हेतु अवश्य भेजें। सभी शाखायें अपने पहुँचने की पूर्व सूचना दिनांक 20 मई तक केन्द्रीय कार्यालय को जयपुर अवश्य भेजें। इस तारीख तक जिन सदस्यों का रजिस्ट्रेशन हो जावेगा, उन्हें एक आकर्षक किट अधिवेशन स्थल पर प्रदान की जायेगी।

सम्पर्क-सूत्र

1. पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.) फोन नं. (0141) 2705581/2707458
2. पण्डित अशोक लुहाड़िया, निर्देशक - तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़ आगरा मार्ग, डी. पी. एस. के सामने, सासनी, जिला-महामायानगर (उ.प्र.) फोन - (0571) 2223391, मो. 09897890893

2 मई 2008, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

निःशुल्क मंगा लें...

आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित समयसार ग्रन्थ की डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल कृत ज्ञायकभाव प्रबोधिनी हिन्दी टीका, पृष्ठ 648, कीमत 50 रुपये का निःशुल्क वितरण श्री अजितकुमारजी तोतूका परिवार, जयपुर की ओर से साधर्मी भाई-बहिनों, ब्रह्मचारियों, मंदिरों, वाचनालयों हेतु किया जा रहा है।

इच्छुक महानुभाव 15/- रुपये के फ्रेश डाक टिकिट निम्न पते पर भेजकर मँगा लेवें। ध्यान रहे यह योजना **15 जून, 2008** तक ही है।

ह्न निःशुल्क साहित्य वितरण विभाग
श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15 (राज.)

आत्मार्थी कन्या विद्या निकेतन का शुभारम्भ

नई दिल्ली : यहाँ आत्मसाधना केन्द्र पर भगवान महावीरस्वामी जन्मजयन्ती एवं उपकार दिवस पर 20 अप्रैल, 08 को **आत्मार्थी विद्या निकेतन** का शुभारम्भ इसी वर्ष जुलाई से करने का संकल्प किया गया।

इस विद्या निकेतन में 8 वीं कक्षा पास 15 बालिकाओं को प्रवेश देकर उन्हें दिल्ली के प्रतिष्ठित सी.बी.एस.ई. बोर्ड के शिक्षण संस्थान में 9 वीं से 12 वीं कक्षा तक अंग्रेजी व हिन्दी माध्यम में प्रवेश दिलाया जायेगा।

बालिकाओं के सुनहरे भविष्य के लिये मुमुक्षु समाज का देश में प्रथम विद्यालय **आत्मार्थी कन्या विद्या निकेतन** आवेदन-पत्र आमंत्रित करता है। आवेदन पत्र विदुषी राजकुमारी जैन (मो.09414753414), निदेशक-आत्मार्थी विद्या निकेतन, आत्म साधना केन्द्र, घेवरा मोड, रोहतक रोड, नई-दिल्ली के पते पर 20 मई, 08 तक एक फोटो व 8 वीं की मार्कशीट की फोटोकॉपी सहित भेजें।

ह्न सुमति सेठिया

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

18 मई से 4 जून	अलीगढ	शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर
5 जून से 30 जुलाई	विदेश यात्रा	धर्म प्रचारार्थ
3 से 12 अगस्त	जयपुर	शिक्षण-शिविर
27 अगस्त से 3 सितम्बर	मुम्बई	श्वेताम्बर पर्यूषण
4 से 14 सितम्बर	मुम्बई	दशलक्षण महापर्व

स्लिपडिस्क रोगी ध्यान दें !

सम्पूर्ण उपचार बिना दवा, बिना कसरत, बिना चीरफाड, बिना आराम किए विश्व की नवीनतम तकनीक माइक्रो एक्यूप्रेशर द्वारा शीघ्र उपचार।

डॉ. पीयूष त्रिवेदी (मो.) 09828011871
गोल्ड मेडलिस्ट, बी.ए. एम.एस., एम.डी. (एक्यू.)
डिप्लोमा इन योगा, सुजोक (मास्को) एफ.ए.आर.सी. एस. (लंदन)
मेडिनोवा पोली क्लीनिक, केसरगढ, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर
समय : सायं 6 बजे से 9 बजे तक, रविवार को प्रात: 8 से 12 बजे तक
नोट – एक्यूप्रेशर सेवा समिति द्वारा 300 से अधिक निःशुल्क शिविर आयोजित।
अन्य रोग : जोडों का दर्द, गर्दन का दर्द, मोटापा, मायोपैथी, मानस विकृतियां, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप आदि की सफल चिकित्सा।

समयसार संगोष्ठी एवं पुरस्कार समर्पण समारोह सम्पन्न

नई दिल्ली : श्री अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के तत्त्वावधान में सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज के ससंघ सान्निध्य में 23 से 25 अप्रैल, 08 तक बाहुबली एन्कलेव नई दिल्ली में समयसार संगोष्ठी एवं पुरस्कार समर्पण समारोह सानन्द सम्पन्न हुआ।

संगोष्ठी में समयसार की विभिन्न गाथाओं पर सारगर्भित व्याख्यान हुए। व्याख्यानकर्त्ताओं में एलाचार्य श्री श्रुतसागरजी एवं मुनि श्री विकर्षसागरजी के अतिरिक्त सर्वश्री डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल जयपुर, श्री नीरज जैन सतना, डॉ. सुदर्शनलाल जैन वाराणसी, पण्डित धन्यकुमार भौरे कारंजा, पण्डित रतनचन्द भारिल्ल जयपुर, ब्र. हेमचन्द 'हेम' भोपाल, डॉ. राजेन्द्र बंसल अमलाई, डॉ. राकेश शास्त्री अलीगढ़, डॉ. अशोक गोयल दिल्ली, डॉ. वीरसागर दिल्ली, पण्डित राकेश शास्त्री लोनी, पण्डित विराग शास्त्री जबलपुर तथा पण्डित अरुण मोदी सागर प्रमुख थे।

सभी वक्ताओं के व्याख्यानों के उपरान्त आचार्य श्री विद्यानन्दजी एवं डॉ. भारिल्ल ने अपनी सटीक टिप्पणी से विषय का प्रतिपादन किया, जिससे श्रोताओं को गम्भीर विषय समझने में आसानी रही।

दिनांक 25 अप्रेल को विद्वत्परिषद् द्वारा प्रवर्तित विभिन्न पुरस्कार प्रदान किये गये। पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओं में डॉ. श्रीरंजनसूरीदेव पटना, श्री राजमल जैन दिल्ली, पण्डित विराग शास्त्री जबलपुर, डॉ. राकेश शास्त्री अलीगढ़ तथा पण्डित मनोहर मारवड़कर नागपुर को विद्वतरत्न की उपाधि से विभूषित किया गया। पुरस्कार स्वरूप सभी को पाँच-पाँच हजार रुपये की नगद राशि, शॉल, श्रीफल, प्रशस्ति पत्र व वाग्देवी सरस्वती की प्रतिकृति सम्मान स्वरूप प्रदान की गई।

आजीवन श्रुत सेवा सम्मान योजना के अन्तर्गत 75 वर्ष से अधिक आयु के विद्वानों को इस अवसर पर सम्मानित करते हुये, उन्हें सारस्वत मनीषी के विरुद से विभूषित किया। समारोह में समागत विद्वत्परिषद् के अन्य सदस्यों में प्राचार्य कुन्दनलालजी दिल्ली, डॉ. जे.पी. जैन दिल्ली, पण्डित आलोक शास्त्री कारंजा तथा अखिल बंसल जयपुर आदि प्रमुख थे। कार्यक्रम का सफल संचालन विद्वत्परिषद् के महामंत्री डॉ. सत्यप्रकाश जैन ने किया।

ह्न अखिल बंसल, प्रचार मंत्री

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए.(जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैन दर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें –
ए- ४ बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)
फोन : (०१४१) २७०५५८१, २७०७४५८
फैक्स : (०१४१) २७०४१२७